SHODH SAMAGAM

ISSN : 2581-6918 (Online), 2582-1792 (PRINT)

हिन्दी सिनेमा के ध्वनि शिल्प में आये परिवर्तन का आलोचनात्मक अध्ययन

पृथ्वी सेंगर, शोधार्थी, जनसंचार केन्द्र,
राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर, राजस्थान, भारत

ORIGINAL ARTICLE

Corresponding Author
पृथ्वी सेंगर, शोधार्थी, जनसंचार केन्द्र,
राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर,
राजस्थान, भारत

shodhsamagam1@gmail.com

Received on : 03/11/2020
Revised on : -----
Accepted on : 10/11/2020
Plagiarism : 1% on 03/11/2020

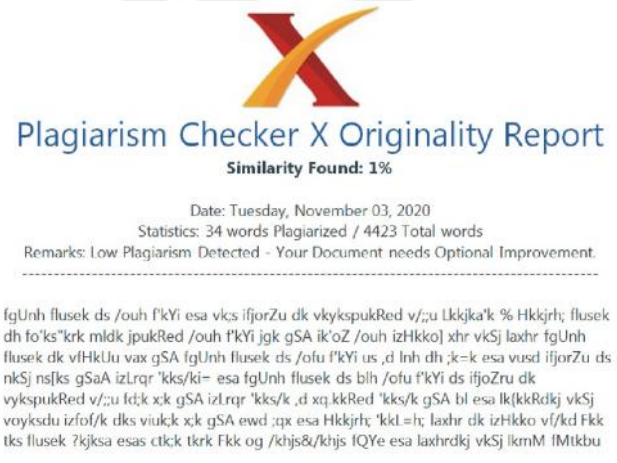
Plagiarism Checker X Originality Report
Similarity Found: 1%

Date: Tuesday, November 03, 2020
Statistics: 34 words Plagiarized / 4423 Total words
Remarks: Low Plagiarism Detected - Your Document needs Optional Improvement.

fgUnh flusek ds /ouh f'kYi esa vk;s ifjorZu dk vkykspukRed v/;;u Lkkjka'k % Hkkjrh; flusek dh fo'ks"krk mldk jpukRed /ouh f'kYi jgk gSA ik'oZ /ouh izHkko] xhr vkSj laxhr fgUnh flusek dk vfHkUu vax gSA fgUnh flusek ds /ofu f'kYi us ,d lnh dh ;k=k esa vusd ifjorZu ds nkSj ns[ks gSaA izLrqr 'kks/k&i= esa fgUnh flusek ds blh /ofu f'kYi ds ifjoZru dk vykspukRed v/;;u fd;k x;k gSA izLrqr 'kks/k ,d xq.kkRed 'kks/k gSA bl esa lk{kRdkj vkSj voyksdu izfof/k dks viuk;k x;k gSA ewd ;qx esa Hkkjrh; 'kkL=h; laxhr dk izHkko vf/kd Fkk tks flusek ?kjksa esas ctk;k tkrk Fkk og /khjs&/khjs fQYe esa laxhrdkj vkSj lkmM lMtkbu

शोध सार

भारतीय सिनेमा की विशेषता उसका रचनात्मक ध्वनि शिल्प रहा है। पार्श्व ध्वनि प्रभाव और गीत–संगीत हिन्दी सिनेमा का अभिन्न अंग है। हिन्दी सिनेमा के ध्वनि शिल्प ने अपनी एक सदी की यात्रा में अनेक परिवर्तन के दौर देखे हैं। प्रस्तुत शोधपत्र में हिन्दी सिनेमा के इसी ध्वनि शिल्प के परिर्वतन का अलोचनात्मक अध्ययन किया गया है। प्रस्तुत शोध एक गुणात्मक शोध है। इस में साक्षात्कार और अवलोकन प्रविधि को अपनाया गया है। प्रस्तुत शोध से यह विश्लेषण निकलता है कि मूक युग में फिल्मों के स्थान पर सिनेमा हॉल में बजने वाले संगीत में भारतीय शास्त्रीय संगीत का प्रभाव अधिक था। वह धीरे–धीरे फिल्म में संगीतकार और साउड डिजाइन तक के रूप में विकसित होता गया। पचास–साठ के दशक से भारतीय शास्त्रीयता से प्रभावित फिल्मी संगीत विदेशी संगीत संस्कृति जेज, रेप, रॉक आदि से प्रभावित होने लगा, और 21वीं सदी में इसका पुर्णतः पश्चिमीकरण को गया है। कहीं–कहीं आंचलिक बोली व भाषा में गीत–संगीत में भारतीय संगीत की झलक मिलती है परन्तु वह भी पश्चिमी साजों पर ही निर्मित होता है। साथ प्रयोगवादी शैली भी इस समय की मुख्य विषेशता है।

मुख्य शब्द

सिनेमा, ध्वनि शिल्प, गुणात्मक शोध, संगीतकार, प्रयोगवादी शैली।

प्रस्तावना

भारतीय सिनेमा की विशेषता उसका रचनात्मक ध्वनि शिल्प रहा है। विशेषकर हिन्दी सिनेमा ने विश्व पटल पर अपनी छवि अपने मधुर गीत–संगीत के रूप में स्थापित की है। पार्श्व ध्वनि प्रभाव और गीत – संगीत हिन्दी सिनेमा का अभिन्न अंग है। इस ध्वनि शिल्प ने हिन्दी सिनेमा में अनेक परिवर्तन के दौर देखे हैं। प्रस्तुत

प्रस्तुत शोधपत्र में हिन्दी सिनेमा की एक शताब्दी की यात्रा पर एक विहंग दृष्टि से अवलोकन करते हुए इन दस दशकों में आये परिवर्तन का विश्लेषण किया गया है।

हिन्दी सिनेमा का प्रारम्भ 1913 ई. में दादा साहेब फाल्के के रचानात्मक उत्साह और विदेशी बहिष्कार अंदोलन में स्वदेशी फिल्म निर्माण के स्वप्न के साकार होने के साथ हुआ। धुंडीराज गोविन्द फाल्के इग्लैंड से फिल्म कैमरा लाये, और भारतीय दर्शको को 'राजा हरिश्चन्द्र' फिल्म का निर्माण कर मूक युग की शुरूआत की। भारत की पहली फिल्म 'राजा हरिश्चंद्र' के केवल दृश्यों ने भारतीयों को ऐसा मोहपाश में बांधा कि अनेक धनिक और कलात्मक निर्माता–निर्देशक भारतीय कहानियों और पात्रों के साथ फिल्म निर्माण क्षेत्र में आ गये। यहाँ से भारतीय फिल्म निर्माण एक उद्योग का रूप लेने लगा। धीरे–धीरे यह एक लाभकारी उद्योग बन गया। आगे के दो दशकों तक मूक फिल्मों ने दर्शकों को अपना बना लिया। इस समय देश में अनेक बेहतरीन फिल्में बनी। जैसेः सावकारी पाश, कालिया मर्दन, कालिदास और अन्य।

भारत की पहली सवाक् फिल्म 'आलम आरा' का प्रदर्शन इंपीरियल मूवीटोन के अर्देशिर ईरानी ने 14 मार्च 1931 में बंबई के मैजिस्टिक थियेटर में किया। यहाँ से भारतीय फिल्में हिन्दी, गुजराती, मराठी, बंगला आदि भाषा विशेष की होती गई। दृश्य और स्वर के इस मेल से फिल्में दृश्य–श्रव्य माध्यम के सम्पूर्ण रूप में आई। प्रस्तुत शोधपत्र में हिन्दी सिनेमा के इसी ध्वनी शिल्प का विश्लेषण करने से पहले एक दृष्टि ध्वनी तकनीकी विकास पर डालना अनिवार्य बन जाता है।

फिल्मों में ध्वनि का विकास

फिल्मों में ध्वनि की विकास यात्रा की शुरूआत 1857 में ध्वनि को रिकार्ड करने के यंत्र फोनोग्राफी के अविष्कार के साथ हुई। 'एडॉयार्ड लियोन स्कॉट डे मर्टिविले' ने एक ऐसे यंत्र 'फोनोटोग्राफ' का निर्माण किया जो ध्वनि को एक 'सूट कवार्ड पेपर' पर प्रत्यक्ष दिखा सकता था। पर यह यंत्र ध्वनि को पुनः प्ले नहीं कर सकता था। सन् 1849 में टेलिफोन का अविष्कार पहले ही चुका था। अतः उस समय थोमस अल्वा एडिशन का ध्यान विशेष तौर पर साउंड रिर्कोडिंग पर गया। एडिशन ने स्कॉट के रिकार्ड यंत्र और ग्राहम बेल के टेलिफोन यंत्र का बारीकी से ध्यान कर एक रिर्कोडिंग प्लेयर का रेखाचित्र बनाया, जिस पर उनके यांत्रिक सहयोगी 'जॉन करूएसी' ने सन् 1877 में 'टीनफोइल फोनोग्राफ' को बनाया। इस तरह करूएसी ने विश्व का पहला वाइज रिकार्ड अपनी आवाज में 'मेरीस लिटिल लेम' कविता के रूप में किया। इसके बाद सन् 1878 में विश्व का पहला रिकार्डेड संगीत 'जुल्स लेवी' का 'यांकी दूडे' था। सन् 1897 में मार्कोनी ने इटली में वॉरलेस टेलिग्राफी का अविष्कार किया। इसके बाद मई 1887 में जर्मन एमाइल बर्लिनर ने ग्रामोफोन का अविष्कार किया, जो संगीत को जनमानस तक पहुँचाने का लोकप्रिय माध्यम बना।(loc.gov,2020)

इस दौरान एडिशन ने बल्ब का अविष्कार किया और इस के बाद फिर एक बार फोनोग्राफी के विकास में रूचि ली। इस बार एडिशन ने फोनाग्राफ और चलचित्रों को एक साथ लाने पर ध्यान दिया। 19वीं सदी के अतिंम दशक में मूवी कैमरो को विकसित करने के अनेक प्रयास किये जा रहे थे। एक मिनट से पाँच मिनट और अधिक अवधि तक की फिल्में बनाने का प्रयास किया जाने लगा था। ऐसे में एडिशन ने अपने सहयोगी डिक्सन के साथ अपने फोटो रील और फोनोग्राफ को एक साथ मशीनरी प्रयोग करके किनोटोस्कॉप का निर्माण किया। यह पहला ऐसा यंत्र था जिसमें एक व्यक्ति एक छिद्र से फिल्म को चलते देख सकता था, इसमें चलचित्र और ध्वनि दोनों ही एक साथ चलते थे। सन् 1890–1895 तक डिक्सन ने कई लघु फिल्मों का निर्माण किया, जिसमें कुछ में ध्वनि का भी प्रयोग किया गया था, लेकिन इस यंत्र में असुविधाएं अधिक थीं। सन् 1906 में 'रेडियो के पितामह' के नाम से प्रसिद्ध 'ली डे फोरेस्ट' ने ऑडिशन वक्यूम ट्यूब का अविष्कार किया, जो पहला अम्पलीफिकेशन यंत्र था। इस अविष्कार ने रेडियो, टेलिविजन, फिल्म, और अधिक दूरी के टेलिफोन में क्रांति ला दी। इसके बाद भी ध्वनि और फिल्मों को एक साथ लाने के प्रयोग होते रहे, परन्तु जनमानस को उनका प्रदर्शन सन् 1927 में ही सम्भव बन सका। (loc.gov,2020)

मूक फिल्में जनमानस में अत्यधिक लोकप्रिय थी। न तो दर्शकों को आवाज की कमी अनुभव होती थी, न ही निर्माताओं कों, परन्तु वैज्ञानिक इस पर प्रयास करते रहे (अग्रवाल, 2005)। फिल्म कैमरे, रिकॉडिंग और प्रदर्शन में अनेक प्रयोग किये गए। इस समय फिल्मों के तकनीकी से लेकर कला पक्ष तक में प्रयोग किये गये। दृश्य और ध्वनि के इस संगम का पहला प्रयास सन् 1926 में 'डॉन जोन' में ध्वनि प्रभाव के रूप में हुआ, परन्तु पहली सम्पूर्ण सवाक फिल्म 'जेज सिंगर' रही, इसमें संवाद, गीत–संगीत और पार्श्व ध्वनि का प्रयोग किया गया था। (loc.gov, 2020)

सन् 1927 में आई पहली सवाक फिल्म 'जेज सिंगर' की रिकार्डिंग वीटा टेप 'साउंड ऑन डिस्क' पर हुई थी। इसमें सभी आडियो मात्र एक ही 'फोनोग्राफ रिकार्ड' पर रिकार्ड हुए थे, जिसे प्रदर्शन के लिए रियलटाइम प्रोजेकटर के साथ रियलटाईम समायोजित किया गया था। अतः इस में एक विशेष प्रकार के कैमरे का प्रयोग किया गया जिसमें दृश्य और ध्वनि की दो पट्टी होती थीं, यही कारण था कि इस समय कलाकार दृश्यंकन के साथ ही संवाद और गीत –संगीत रिकॉर्ड किये जाते थे। वहीं ध्वनि फिल्मों के लिए विशेष प्रोजेक्टर भी विकसित किये गये। ध्वनि के साथ दृश्यों के मिलान के लिए चलचित्रों को प्रत्येक सेकेंड 24 फ्रेम की गति से चलाया जाने लगा। इस तरह मूक फिल्मों में जैसे दृश्य तीर्वता से आगे बढ़ते थे, जो नाटकीयता का अनुभव कराते थे, वह अब वास्तविक सहज गति से चलने लगे थे। इस तरह ध्वनि, स्वर, गीतों और दृश्यों को समन्वय के साथ प्रदर्शित किया जाने लगा। भारत में सन् 1931 में प्रदर्शित 'आलम आरा' पहली सवाक फिल्म थी। (loc.gov,2020)

सन् 1976 में डॉल्बी स्टरियो ध्वनि तकनीक आई, जिसने सिनेमा के साउंड को प्रभावशाली बना दिया। इसके बाद सन् 1990 में 5.1 चैनल का डिजिटल साउंड सिस्टम 'कॉडेक सीडीएस' आया, जिसने ध्वनि को रिकॉर्ड और प्ले करना सरल और प्रभावशाली बनाने के साथ ही गुणवत्ता भी प्रदान की। सन् 1991 में 'डॉल्बी डिजिटल', 1993 में 'डीटीएस' और सन् 1993 में एसडीडीएस' आई तकनीकों सिनेमा में ध्वनि शिल्प को एक नया ही आयाम दिया (पुनः प्राप्ति 20 अक्टूबर 2020)। अब सिनेमा घरों में फिल्म की आवाज़ें चारों दिशाओं से गुंजने लगी। (archive.org, 2020)। पाँच चैनल से अब 7.1 चैनल की तकनीक आ चुकी हैं। डॉल्बी एटम जैसे अति आधुनिक साउंड तकनीक से सिनेमाई ध्वनि हॉल में स्पष्ट, तेज और चारों तरफ से सुनाई देती है। इसने निर्माता–निर्देशकों को फिल्मों में गीत–संगीत से इतर ध्वनि पर भी विशेष ध्यान देने के लिए विवश कर दिया है।

शोध का उद्देश्य

1. हिन्दी सिनेमा में ध्वनि शिल्प का विश्लेषण।
2. हिन्दी सिनेमा में गीत–संगीत में आये परिवर्तन का अध्ययन।
3. 21वीं सदी के हिन्दी सिनेमा के ध्वनि शिल्प में आये परिवर्तनों को चिन्हीत और विश्लेषित करना।

शोध का महत्त्व

मधुजा मुखर्जी (2012) ने अपने अध्ययन में हिन्दी सिनेमा के गीत और संगीत को उनकी कहानी और माइज एन सीन के अनुसार विश्लेषण किया है, जिसमें हिन्दी सिनेमा के एक सदी के इतिहास में उभरे गीत–संगीत के मुख्य चरणों पर प्रकाश डाला है। वहीं संगीता गोपाल और सुजाता मूर्ती (2008) ने अपने अध्ययन में हिन्दी सिनेमा के ऐतिहासिक परिपेक्ष में संगीत को विश्लेषित कर इसके भारत से बाहर हुए प्रसार और प्रशंसा को चिन्हीत किया है। प्रस्तुत शोधपत्र में हिन्दी सिनेमा के ध्वनि शिल्प में आये परिवर्तन को चिन्हींत कर उनका विश्लेषण किया गया है। शोधपत्र में केवल संगीत की नहीं, ध्वनि प्रभाव की भी प्रकाश डाला गया है। सिनेमा का शोध क्षेत्र अत्यंत व्यापक है, और इसका महत्त्व इसके समाज के साथ घनिष्ट अर्न्तसम्बंध में निहित हैं। समाज के साथ इस अर्न्तसम्बंध से सिनेमा के प्रत्येक रूप, अंग पक्ष का अध्ययन अनिवार्य बन जाता है। सिनेमा एक प्रभावशाली माध्यम है, जिसका सर्वाधिक प्रभाव युवा वर्ग पर पड़ता है। साथ ही सिनेमा में सभी कलाओं का एक संगम निहित है, इसलिए इसके शिल्प के संलेषण और विश्लेषण की आवश्यकता बन जाती है। ध्वनि शिल्प में ध्वनि प्रभाव, गीत संगीत आधारभूत अंग हैं। गीत–संगीत की एक विशिष्टता उसकी सामाजिकता होती हैं। सभी संस्कृतियों में गीत–संगीत का विशेष

महत्त्व रहता है। संस्कृतियों और समाजों के रूप–स्वरूप में परिवर्तन के साथ ही गीत संगीत के रूप–स्वरूप में अन्तर आ जाता है। यही कारण है की समय–समय पर रेप, जेज़ जैसी अनेक संगीत विधायें क्रांतिकारी विचारों की अग्रदूत बनी और उन्हें आवाज़ दी। अतः यह स्पष्ट है कि हिन्दी सिनेमा के ध्वनि शिल्प में आये परिवर्तन के अध्ययन से सामाजिक परिवर्तन का भी अप्रत्यक्ष रूप से दृष्टिविचार हो जाता है।

शोध विधि

प्रस्तुत शोध एक गुणात्मक शोध है। इस में साक्षात्कार और अवलोकन प्रविधि को अपनाया गया है। साक्षात्कार सिनेमा क्षेत्र के प्रोफेशनल, शिक्षक और आलोचकों, के लिए गये हैं। वहीं अवलोकन विशेषतः फिल्मफेयर पुरस्कार विजित फिल्मों का किया गया है। वहीं द्वितीय स्रोत में यूटूब, सिनेमा से संबंधित वेवसाइट पुस्तकें, शोधपत्र आदि हैं।

सिने शिल्प

सिनेमा के दो अंग होते हैं यांत्रिकी और कलात्मकता। यांत्रिकी में कैमरा, लाईट, आदि उपकरण सोफ्टवेयर आते हैं, परन्तु इनका उपयोग किस तरीके से, किस रचनात्मकता से किया जा रहा है या किया जा सकता है वह कलात्मकता है। इस कलात्मकता का स्वरूप ही सिने शिल्प है।

कला और शिल्प का सम्बंध भाव और स्वरूप का है। जैसे किसी गीत के शब्द रचना उसका शिल्प और इन शब्दों के सन्योजन से निर्मित भाव की सामुहिकता कला कहलाती है। कला नदी है, जिसके तटबन्ध उसका शिल्प है। सिनेमा में शिल्प उसकी पटकथा संरचना शैली, दृश्य संयोजन और ध्वनि संयोजन से निर्मित होता है। प्रस्तुत शोध पत्र में ध्वनि शिल्प का विश्लेषण किया गया है। और इसमें आये परिवर्तनों को चिन्हीत कर उसके कारकों की व्याख्या की गई है।

ध्वनि शिल्प

हिन्दी फिल्मों में ध्वनि शिल्प के दो अंग हैः ध्वनि प्रभाव और गीत–संगीत। ध्वनि प्रभाव किस तरह से निर्मित किया गया है, वहीं गीत–संगीत के शिल्प में क्या अन्तर आये हैं, इस शोध पत्र में विश्लेषित किया गया है।

हिन्दी सिनेमा में ध्वनि का सिहांवलोकन

हिन्दी सिनेमा को मुख्यतः पाँच युगों में विभाजित किया जाता हैः मूक युग, सवाक युग, स्वर्ण युग, व्यवसायिक युग और वर्तमान युग (21वी सदी के प्रारम्भिक दो दशक)।

मूक युग

मूक युग में ध्वनि का प्रयोग फिल्म प्रदर्शन के समय दर्शकों के सामने ही बैंड या संगीत मंडली के माध्यम से किया जाता था। सिनेमा हॉल के आर्थिक स्तर पर निर्भर किया करता था कि वहा ध्वनि प्रयोग कैसा किया जाये। बहुत बड़े और अच्छे हॉल में व्याख्याकर्ता के साथ ही एक बैंड और गायक भी रहते थे, जो फिल्म के दृश्यों की व्याख्या करते रहते थे और प्रसंग अनुसार गीत–संगीत की मण्डली भी सजाते थे। जैसे फिल्म 'संत तुकाराम' में उनके भक्ति गीतों को ऑर्केस्ट्रा पर गाया जाता था (राग, 2007)। धार्मिक–ऐतिहासिक फिल्मों में यह अधिकांशतः होता था। दूसरी तरफ गांव कस्बे के छोटे सिनेमा हॉल में इस प्रकार की कोई व्यवस्था नहीं होती थी।

सवाक युग

सवाक युग की शुरूआत सन् 1931 में आलमआरा के साथ हुई और एक दशक में ही हिन्दी सिनेमा पूर्ण रूप से सवाक हो गया था। इस युग की फिल्मों में तत्कालीन रंगमंच के संगीत का विशेष प्रभाव था। इस समय भारतीय वाद्य यंत्रों का अधिक प्रयोग किया जाता था, और गीतों की संख्या भी फिल्मों में अत्याधिक होती थी। इस समय आम बोलचाल की सरल शब्दरचना में गीत होते थे 'मैं बन की चिड़िया बन बन डोलु', 'आज चांदनी रात है रंग जमाने के लिए', 'प्रेम नगर में बसाऊँगी मैं घर' इत्यादि। संगीत में लोक संगीत और शास्त्रीय रागों के आधार पर

निर्मित होता था। उसको बिम्बों और प्रतीकों के रूप में भी प्रयोग किया जाना शुरू हो गया था। सवाक युग में गीतों का विशेष स्थान था। इस समय फिल्मों में गीत कहानी के हर प्रसंग पर होते थे। सन् 1932 में 'इन्द्रसभा' फिल्म में 71 गीत थे। भारतीय फिल्मों में गीत कहानी का भाग भी होते थे, साथ ही एक मनोरंजन के लिए भी होते थे, जिनका कहानी के उतार–चढ़ाव से कोई सरोकार नहीं होता। सवाक युग था, ए. के. सहगल का और उनका साथ दिया सुराइया, शमशाद बेगम, नुरजहाँ जैसे दिग्गज कलाकारों ने (अग्रवाल, 2009)। चालीसवें दशक में हिन्दी सिनेमा के संगीत में रिद्धिम और नई संगीत संरचना ने स्थान बनाना शुरू कर दिया। तबले और हारमोनियम के साथ ए. के. सहगल के स्वर लोगों में लोकप्रिय होते जा रहे थे, पर यह अभी इसमें शास्त्रीयता का पुट था। परन्तु चालीसवें दशक में संगीत जनमानस की लोक धुनों पर तालबद्ध होने लगा।

ध्वनि को केवल संगीत तक ही सीमित नहीं रखा गया, इस समय तीन संगीतकारों ने विशेष भूमिका निभाई गुलाम हैदर, नौसाद अली, और हिन्दी फिल्मों के संगीत को उसका वास्तविक स्वरूप देने वाले अनिल विश्वास। गुलाम हैदर ने अपनी फिल्म 'खजांची'(1945) में पंजाबी लोकधुनों के साथ संगीत दिया जो हिन्दी सिनेमा के एक प्रतिष्ठित मॉडल के रूप में प्रयोग होने लगा। दूसरे नौशाद अली ने 'प्रेमनगर'(1940) और 'रतन'(1944) में ढोलक के साथ जो ढाप दी, वह सिने संगीत की मधुरता का प्रतीक बन गया (राग, 2007)। सिनेमा में संगीत शास्त्रीयता से अधिक अपनी मधुरता के लिए लोकप्रिय होने लगा। इस समय अनिल विश्वास ऐसे संगीत निर्देशक आये, जिन्होंने हिन्दी सिनेमा के संगीत को आधुनिकता प्रदान की फिल्में अपने ही संगीत का शिल्प निर्मित करने लगी। अब संगीत रंगमंच या किसी विशेष शास्त्रीयता से ओतप्रोत नहीं होता था। आगे के वर्षो में इन्हीं तीन धाराओं के विविध स्वरूपों ने हिन्दी सिनेमा का सबसे मधुर संगीत युग दिया।

भृगुनाथ पान्डेय लिखते हैं 'शांताराम के गहरी सूझबूझ भरे निर्देशन में इस बेमेल विवाह 'दुनिया न माने' की व्यंग्यात्मकता को और अधिक तीखा बना दिया था। दृश्यों को और अधिक असरदार बनाने के लिए उन्होंने विभिन्न प्रकार की ध्वनियों का आश्रय लिया। नायिका और उसके बूढ़े पति की बहन के बीच वाक्युद्ध को नेपथ्य में बिल्लियों की लड़ने की आवाजों के द्वारा व्याख्यायित किया है। इसी तरह जब बूढ़ा पति अपनी मूंछों को रंग रहा होता है, तब नेपथ्य से बर्तन में कलई करने वाले की आवाज आती है –कलई करा लो। इस फिल्म में बूढ़ा पति अपनी असमर्थता को छुपाने के लिए कई तरह से छाते का प्रयोग करता है। कहा जाता है कि इसके ध्वनि अंकन के लिए विदेशों में भी इसे फिल्मकारों द्वारा यह साबित किया है कि 'तकनीक' साधन के अलावा और कुछ नहीं है और वे बहुत साधारण साधनों से भी ऐसे प्रभाव उत्पन्न कर सकते हैं जो बहुत मंहगे उपकरणों द्वारा भी संभव न हो सके (अग्रवाल, 2009)।''

ध्वनि एक नया विषय के रूप में रूचि का विषय था जिसमें निर्देशक अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए रचनात्मक प्रयोग करते रहे। बॉम्बे टॉकीस, इम्पीरियल कम्पनी और सोहराब मोदी की फिल्मों में ध्वनि प्रभाव के विशिष्ट प्रयोग देखने को मिलते हैं।

स्वर्ण युग

सवाक् युग में अनिल विश्वास, नौशाद और गुलाम हैदर ने हिन्दी सिनेमा में ध्वनि शिल्प को जो रूप दिया उस पर आने वाले संगीतकारों ने स्वर्ण युग की रचना कर दी। ओ.पी. नयार, शंकर–जयकिशन, आर डी बर्मन, एस डी बर्मन, सी. रामचन्द्र गोपालचारी ने हिन्दी सिनेमा के अमर गीत संगीत दिए। स्वर्ण युग में ध्वनि शिल्प पश्चिमी ध्वनि शिल्प से अल्पाधिक प्रभावित हुआ। दृश्यों के पार्श्व संगीत इस युग में पश्चिमी धुनों में दिया जाने लगा। पश्चिमी वाद्य यंत्र मुख्यता से अपयोग में लाये जाने लगे। जेज, रॉक, कल्ब संगीत और कैबरे संगीत का अधिक प्रचलन हो गया (राग, 2007)। इस युग में हर फिल्म में जहाँ पाँचवें दशक में क्लब गीत अनिवार्य था, वैसे ही छठे और सातवें दशक में कैबरे गीत होना अनिवार्य हो गया था।

स्वर्ण युग के अतिम वर्षों में गीत संगीत पश्चिमीकरण हो गया था। यह युग रोमांटिक और संवेदनशील गीत–संगीत का था। इस समय के गीतों के शब्द अलंकृत व साहित्यिक होते थे। लता मंगेशकर, मोहम्मद रफी, किशोर कुमार, आशा भोसले जैसे स्वर सरताजों ने गीतों में आत्मा को पीरो दिया था। इनकी आवाज की ही मिठास

में ऐसा जादू था कि संगीत को धीमा रख कर गायक–गायिकाओं के स्वरों को उभारा जाता था।

सन् 1952 में फिल्म 'आन' में नौशाद अली ने पहली बार पश्चिमी संगीत को हिन्दी सिनेमा में लेकर आये (राग, 2007)। पहली बार 100 पीस ऑक्रेस्ट्रा का उपयोग किया गया और हिंदी सिनेमा में नए गीत संगीत नृत्य का दौर चला। इसे पहले ग्रामीण लोकनृत्य और गीत का प्रभाव अधिक था। हिंदी सिनेमा में पश्चिमी संगीत की शुरूआत जेज़ संगीत के प्रभाव से हुई जो 'इना मिना डीका' के रूप में सामने आया और इसी के साथ क्लब संगीत का दौर 5वें दशक में चलने लगा और इसके बाद 6वें से 8वें दशक तक कैबरे संगीत का दौर चला। इसका मुख्य कारण विश्व स्तर पर जेज़, रॉक, जैसे संगीत विधाओं का प्रचलन था, जिससे युवा काफी प्रभावित थे, वहीं भारत भी अंग्रेजों से आजाद, नव राष्ट्र के सपने में जी रहा था। नए संगीतकार, कलाकार, और गायक अपनी इस नव ऊर्जा और विचारों को नए संगीत में लेकर आये। अनिल विश्वास, नौशाद, शंकर–जय किशन, आर. डी. बर्मन, एस. डी. बर्मन जैसे संगीतकार और आशा, लाता, मोहम्मद रफी, किशोर कुमार जैसे गायक–गायिका इस पश्चिमी और भारतीय संगीत में बेहतरीन समंजस्य बना पाये। हेलन, बिन्दु और नादिया जैसे कलाकारों ने इन गानों के दृश्यांकन को अपने नृत्य और अभिनय से लोकप्रिय बना दिया है (राग, 2007)।

पश्चिमीकरण के दो रूप थे, क्लब संगीत और दूसरा संगीत का पश्चिमी रागों व साजों पर होना, जैसे 'अजीब दास्ता हैं ये', 'आगे भी ना जाने ना तु' आदि। कव्वाली और गजल हमेशा से सिने संगीत में विशेष स्थान रखती है। गजल ने टुटे हुए दिलों को आवाज दी जो आज भी निरन्तर चल रही है। 4वे और 5वें दशक में शुरू हुए पश्चिमी संगीत अधिकांशतः क्लब संगीत में सामने आता था अन्यथा भारतीय संगीत की ही छाप रहती थी। पर धीरे–धीरे पश्चिमीकरण अधिक होने से संगीत में परिवर्तन आने लगा और देशी संगीत पृष्ठभूमि विशेष पर ही निर्मित होने लगा।

व्यावसायिक युग

सातवें दशक में हिन्दी सिनेमा में व्यवसायिकता अधिक हावी होती गई और रचनात्मकता पीछे छुटती गई। स्वर्ण युग में कलात्मक अभिव्यक्ति और विचार क्रांति का अग्रदुत बना यह सिनेमा, अब शुद्ध व्यवसाय का रूप लेने लगा। व्यवसायिक लाभ के लिए हिंदी सिनेमा में मासाला फिल्में अधिक बनने लगी, ऐसे में विचारों की कलात्मक अभिव्यक्ति मुख्यधारा के सिनेमा से अलग सामांतर सिनेमा के रूप में आगे बढ़ने लगी। यह देख सकते हैं कि इस युग में सिनेमा जिसके दो पक्ष कला और व्यवसाय ने अपने–अपने रास्ते बना लिए। स्वर्ण काल में यह दोनों ही एक दूसरे के पर्याय थे। इस युग में सामांतर और व्यवसायिक सिनेमा के रूप में बट गये। इस का प्रभाव सिने शिल्प पर भी पड़ा। शिल्प में नूतन प्रयोग सामांतर सिनेमा में ही सामने आये। कथानक, दृश्य संयोजन और ध्वनि का रचनात्मक प्रयोग सामांतर सिनेमा में मुख्यतः से देखे गये लेकिन यह व्यावसायिक रूप से सफल नहीं हो पाई। वहीं व्यावसायिक फिल्में जीवन से जुड़े कथानक से दूर होती गई और हिन्दी सिनेमा एक बनी–बनायी परिपाटी पर चलने लगी।

यही वह दौर था जहाँ फिल्में पुरूष प्रधान होने लगीं। फिल्मों के केंद्र में हीरो होता था और हीरोइनें सिर्फ गाने और पेड़ के आस – पास नाचने के लिए होती थी। इस समय की सभी फिल्मों का एक ही मूल भाव होता था, एक हीरो होता है वो एक लड़की से प्यार करता है और एक विलन होता है जो उसकी लाइफ में समस्याएं उत्पन्न करता है। हीरो अन्त में विलन को हरा देता है। हीरो में सारी खुबियां होती है, वह पढ़ने में अच्छा होता है, शरारती होता है, अच्छा गाता है, डांस भी अच्छा करता है। यह सिनेमा के पराभव का समय था। ऐसे में संगीत का भी प्रयोग केवल मनोरंजन मात्र था। इस समय के गीत–संगीत पर पश्चिम के एल.एस.डी कल्चर, हिप्पी संस्कृति और बिटल्स जैसी विचारोंत्तेजक गायन शैलियों का प्रभाव था, पर यहां हिन्दी फिल्मों में इनके भाव ना होकर केवल इनकी धुने और राग थे (राग, 2007)।

इस समय सबसे अधिक प्रभावित रॉक संगीत ने किया। पंकज राग (2007) अपनी पुस्तक 'धुनों की यात्रा' में लिखते हैं कि "रॉक के अदंर तकनीकी क्रांति के बीज थे। रॉक के रूप में संगीत में पहली बार ऑकॉसटीक वाद्यों

के जगह इलैक्ट्रोनिक वाद्यों का व्यापक इस्तेमाल हुआ। रॉक वह पहली संगीत शैली थी जिसने ध्वनि और रिकॉर्डिंग स्टूडियो के तकनीकी विशेषज्ञों की भी संगीत उत्पादन में महत्त्वपूर्ण भूमिका बनाई। अति तीव्र एमप्लीफीकेशन, निरंतर चलने वाला रिद्म और कई बार सिम्फ़नी और रिद्म की अनुपूरकता से निर्मित सिम्फोनिक रॉक जैसी संगीत की प्रवृतियों और प्रभावों ने आठवें दशक में फिल्म संगीत का परिदृश्य काफ़ी हद तक बदल दिया। ऑरकेस्ट्रेशन में नए वाद्ययंत्रों और इलेक्ट्रॉनिक वाद्यों का आगमन, नई पाश्चात्य् और लैटिनी बीट्स का बढ़ता प्रयोग, भारतीय और पाश्चात्य शैलियों का फ्युजन जैसी कई प्रव्त्तियाँ तेजी से भारतीय संगीत में आईं।"

20वीं सदी के अंतिम दशक में भी पाश्चात्य संगीत का प्रभाव रहा जो उत्तरोतर बढ़ता ही चला गया। इस समय संगीत लोकप्रियता और व्यावसायिक केंद्रित हो गया था। विनस, टिप्स, टी सिरीस जैसे कम्पनीयों के आने से प्रतिस्प्रर्द्धा के बाजारवाद ने मॉस प्रोडक्सन को प्रेरित किया, जिससे गीत संगीत की केवल एक मांग थी कि बाजार में आये और लोकप्रिय हो जाये और कम समय में ज्यादा से ज्यादा गीतों को बनाया व बेचा जाये। ऐसे में बने बनाये रास्ते पर ही सभी संगीतकार चलने लगे। कृतिम संगीत का यह समय था (राग, 2007)।

ऐसा नहीं की इस समय अच्छा संगीत बिल्कुल ही नहीं बना। राम लक्षमण, आर. डी. बर्मन, जतिन ललित, ए. आर रहमान, विशाल भारद्वाज जैसे संगीतकारों ने हिन्दी सिनेमा से मधुरता को बिल्कुल लुप्त होने से बचा रखा था। 'मैंने प्यार किया', 'हम आपके हैं कौन', 'रोजा', 'बॉम्बे', '1947 लव स्टोरी', जैसी फिल्मों में संगीत की मेलोडी अभी भी मिलती है। आलका याज्ञनिक, कविता कृष्णमुर्ति, कुमार सानू, उदित्य नारायण जैसे अनेक गायकों ने पश्चिमी कृत्रिमता और भारतीय मधुरता का सुन्दर तालमेल बनाये रखा।

ध्वनि प्रभाव का प्रभावशाली उपयोग अधिकांशतः यर्थाथवादी फिल्मों में देखने को मिलता है। इनमें वास्तविक जीवन को पर्दे पर उकेरने की कोशिश की जाती है। जैसे विधु विनोद चौपड़ा निर्देर्शित 'परिंदे' फिल्म में दृश्यों में संवेदनाओं को उत्प्रेरित करने के लिए ध्वनि का बहुत सुन्दर प्रयोग किया गया है। कबूतरों के उड़ने पर उनके परों की आवाज़, ड्रम और सेक्सोफोन की धुनों से दृश्यों को प्रभावाशाली बनाया गया है। अस्सी और नब्बे के दशक में पार्श्व ध्वनि प्रभावों में ड्रम, कैंगों और सेक्सोफोन के अधिकांशतः उपयोग को देखा गया है।

वर्तमान 21वीं सदी का युग

21वीं सदी के प्रारम्भिक दो दशकों में हिन्दी सिनेमा के ध्वनि शिल्प में आए प्रयोगवादी दृष्टिकोण ने फिल्मों में ध्वनि के रचनात्मक महत्त्व को बढ़ा दिया है। वर्तमान सदी के इन प्रारम्भिक बीस वर्षों में हिन्दी सिनेमा के ध्वनी शिल्प ने तीव्रता से परिवर्तन किया है। इन कुछ वर्षों में प्रदर्शित 'राज़', 'सरकार', 'वान्टड', 'दंगल', 'पा' और 'न्यूटन', ऐसी अन्य फिल्मों ध्वनि के शिल्प पर विशेष ध्यान दिया गया है। अब दृश्य के समकक्ष ही ध्वनि प्रभाव में भी रचनात्मकता देखी जा रही है। फिल्म के ध्वनि प्रभाव में भी एक व्यावसायिकता की शैली भी विकसित होती जा रही है। इसका उदाहरण क्राइम और सस्पेंस फिल्मों में देखा जा सकता है जिनके दृश्यों में भावनाओं, रहस्य को उत्प्रेरित करने के लिए विशेष रूप से ध्वनि प्रभावों का प्रयोग किया जा रहा है।

गीत–संगीत की बात करें तो नब्बे के दशक में शुरू हुए आइट्म सांग फिल्म में एक मुख्य अंग के रूप में सामने आने लगें। अब आइटम सांग से तीन उद्देश्यों की पूर्ति करते का प्रयास किया जाता हैं कहानी का मूल भाव, फिल्म का प्रचार, दर्शकों का मनोरंजन। इस तरह इस में आइटम सांग अधिकांश फिल्मों के अनिर्वाय अंग बन गये हैं चाहे वह फिल्म के अंत या प्रारम्भ में ही क्यों न हो। इन आइटम सांग में एश्वर्य अभिनित, अलिशा चेन्ययी के स्वर में गुलजार का लिखा 'कजरारे, कजरारे.....' विशेष ऊर्दू अदब व संगीत के साथ आइटम गीतों में एक विशिष्ट स्थान रखता है (द लिरिक्स अड्डा, 2020)।

हिन्दी सिनेमा में पश्चिमी संगीत का प्रभाव चालीस के दशक से ही दिखने लगा था, लेकिन अस्सी के दशक के बाद यह अपनी मधुरता खोता हुआ तीव्र संगीत की ओर उन्मुख होता गया। इन दशकों में हिन्दी फिल्म संगीत में पश्चिमी संगीत को ही पूर्णः स्थान मिल चुका है। कहीं–कहीं आंचलिक बोली व भाषा में गीत–संगीत में भारतीय संगीत की झलक मिलती है, परन्तु वह भी पश्चिमी साजों पर ही निर्मित होता है। जैसे 'रंग दे बंसती', 'दिल बोले

हड़िप्पा', जैसे गीत हैं। वर्तमान समय में गीतों के शब्द सरल और आम बोलचाल के हो गये हैं। गीतों में पहले उलहाना देने, भावों की अभिव्यक्ति या नारजगी व्यक्त करने के लिए अंचलिक शब्दों को प्रयोग होता था 'उई मां उई मां ये क्या हो गया', अन्य और आज के समय में सीधे गालियों को उपयोग किया जाने लगा है (साक्षात्कार, सितम्बर, 4, 2020)। गुलजार, जावेद अखतर जैसे अपने आप में हस्ताक्षर बन चुके हैं इन्हें और ऐसे ही गीतरकार है थोड़े बहुत जो भाषाई सीमा का पालन करते दिखते हैं।

संगीत में शस्त्रीयता का लोप होता जा रहा है साथ ही उपयों और रूपकों की भी कमी हा रही है। रिमिक्स का प्रचलन का प्रचन जैसे बढ़ रहा है उसी के साथ उत्तेजक गीत–संगीत की भी भरमार हो गई है। वहीं हिन्दी फिल्मों की पहचान बने कोरस भी अब कम होते जा रहे हैं (साक्षात्कार, अगस्त, 21, 2020)। हिन्दी फिल्मों में संगीत एक परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है। इसमें नये–नये प्रयोग भी हो रहे हैं जैसे गैंग्स ऑफ वासेपूर की संगीत में एक ताजगी और कस्वाई छलक थी। पार्श्व ध्वनी प्रभाव भी आज विशेष महत्त्वपूर्ण होता जा रहा है। 'सरकार', 'गैंग्स ऑफ वासेपूर', राज़ी, 'उरी' ऐसे ही अधिकांश फिल्मों में पार्श्व ध्वनी कहानी कहने में भी दृश्यों के समकझ महत्त्वपूर्ण है।

निष्कर्ष

संगीत में समय और समाज के साथ ही परिवर्तन होता रहता है। फिल्मी संगीत में परिवर्तनशीलता का यह गुण अधिक है। हिन्दी सिनेमा के सौ वर्षों में ध्वनि शिल्प भारतीय शास्त्रिय रागों से होता हुआ पश्चिमी संगीत से प्रभावित होते हुए आज पुर्णतः पश्चिमी बन चुका हैं। भारतीय साज और राग विस्मित से हो गये हैं। साथ ही प्रयोगवादी शैली का प्रचलन भी बढ़ गया है। साहित्यिक शब्दावली के स्थान पर गालियों और बेबाक शब्दों का उपयोग हाने लगा है। अइटम सांग का स्थान धीरे–धीरे रिमिक्स के सामने आने लगे और इनका प्रचलन भी अत्यधिक बढ़ गया है। प्रयोग अधिक होने लगे हैं जैसे 'गैंग्स ऑफ वासेपुर' में दिखता है। अतः हिन्दी फिल्म के गीत–संगीत आज परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है लेकिन स्वर्ण युग की मुधरता से अभी बहुत दूर है वहीं पार्श्व ध्वनि प्रभाव विशेष रूप से प्रयोगवादी शैली में प्रभावित कर रहा है।

संदर्भ सूची

1. अग्रवाल, प्रहलाद (सम्पा.) (2009). *हिन्दी सिनेमा बीसवीं से इक्कीसवीं सदी तक.* साहित्य भंडार. इलाहबाद।
2. राग, पंकज. (राग, 2007). *धुनों की यात्रा,* हिन्दी फिल्मों के संगीतकारः 1931–2005. राजकमल प्रकाशन. नई दिल्ली।
3. कुमार, जैनेंद्र. (1976) *साहित्य का श्रेय और प्रेय.* पूर्वोदय प्रकाशन. नई दिल्ली. पृ. 355।
4. जैन, मनीष. (2020, अगस्त, 21) साक्षात्कार।
5. श्याम. (2020, सितम्बर, 4) साक्षात्कार।
6. https://web.archive.org/web/20080405220732/http://www.mtsu.edu/~smpte/table.html. Retrieved on October 15, 2020.
7. https://www.filmcompanion.in/best-of-the-decades/2019/how-the-2010s-changed-hindi-film-music.html
8. www.loc.gov/collections/edison-company-motion-picture-and-sound-recording
9. http://www.thepeoplehistory.com/music.html
10. https://m.timesofindia.com/entertainment/hindi/music/news/is-hindi-film-music-lacking-in-originality/amp_articleshow/65900299.cms
11. The Lyricists Adda. (2020 July 13). Film Companion. Retrieved September 19, 2020, from https://youtu.be/vqcAfWPkf3E/

****